संस्थापित १८६७ ई०

आर्य मित्र

साप्ताहिक

आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश का मुख पत्र

एक प्रति ₹ २.००
वार्षिक शुल्क ₹ १००
(विदेश ५० डालर वार्षिक) आजीवन शुल्क ₹ १०००

● वर्ष : १२२ ● अंक : ३० ● २२ अगस्त २०१७ भाद्रपद शुक्ल पक्ष प्रतिपदा संवत् २०७४ ● दयानन्दाब्द १६३ वेद व मानव सृष्टि सम्वत् : १६६०८५३११८

अब लंदन के विद्यालय में संस्कृत भाषा अनिवार्य

– डा० धीरज सिंह आर्य

लन्दन में एक ब्रिटिश शाला में संस्कृत अध्ययन अनिवार्य कर दिया है। एक, दो नहीं पूरे छः वर्ष संस्कृत की पढ़ाई अनिवार्य है। उस शाला के संस्कृत विभाग के प्रमुख हैं वॉरविक जैसॉफ। जेसॉप कहते है कि संस्कृत अध्ययन के कारण गणित, विज्ञान और अन्य भाषाओं का आकलन सरल हो जाता है।

पॉल मॉस, जो इस शाला के हेडमास्टर कहते है कि देवनागरी लिपि में लिखने का अभ्यास बालक की अंगुलियों की लवक बढ़ाने में सहायकता करता है। इस प्रकार का व्यायाम, एक कलाकार की भाँति उसकी अंगुलियों पर संस्कार करता है। देवनागरी अक्षरों पर जब घोट–घोट कर लिखने का अभ्यास किया जाता है, तो अंगुलियों की अकड़ धीरे–धीरे कोमलता में परिवर्तित होती है। और साथ–साथ संस्कृत उच्चारण का अभ्यास जिह्वा की लचक भी बढ़ा देता है। ऐसा ध्यन्यर्थक उच्चारण मस्तिक के दोनों गोलार्धों को उत्तेजित कर व्यक्ति को निपुण चिन्तक बनाने में भी सहायक होता है। पॉल मॉस आगे कहते हैं कि आज की यूरोप की भाषाएँ बोलने में जिह्वा मुख विवर के बहुतेरे भागों का प्रयोग ही नहीं करती। यह उनकी सीमा–मर्यादा हैं ऐसी सीमा को देवनागरी और संस्कृत भाषा पार कर गयी है, यह कोई साधारण–सा गुण नहीं है। उसी प्रकार लिखने में अँगुलियों का विविध पलयांकित हिलना और चलना देवनागरी लेखन में किया जाता है, वह भी यूरोपीय लिपियों में अपवादात्मक ही जान पड़ता है। अब जो बन्धु रोमन लिपि में हिन्दी पठन–पाठन का आग्रह रखते हैं, उन्हें भी इस जानकारी से विश्वास हो जायेगा। आप भी यदि कुछ अक्षरों को लिख कर देखें, तो विश्वास दृढ़ ही होगा। जैसे का और य, म और रू, ल और रू, ह और ॥ जहाँ रोमन अक्षर केवल रेखाओं से ही काम चला लेते हैं, वहाँ देवनागरी में घुमावदार या वलयांकित अंशों का प्रयोग होता है।

ख, घ, ड़, च, छ, झ, ञ, ठ, ढ, ण, त, थ, द, प, फ, म इन १५ अक्षरों को तो रोमन में लिखा भी नहीं जा सकता।

लिऑन मैक्लरेन नामक बैरिस्टर, जो स्वतः वास्तविक रीति से एक दार्शनिक ही थे, उन्होंने सेण्ट जेम्स स्कूलों की स्थापना १६७५ में की थी। इस शाला में संस्कृत की पढ़ाई छाह वर्ष के लिए अनिवार्य रखी गयी। बिना छह वर्ष अनिवार्य **(compulsory)** संस्कृत सीखे कोई इस शाला से उत्तीर्ण हो ही नही सकता।

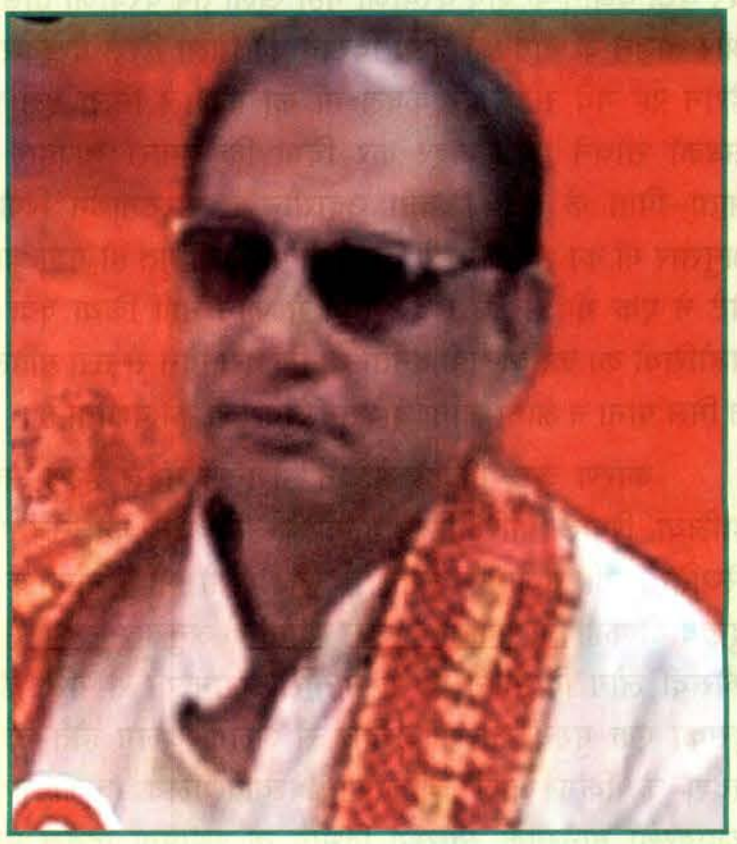

इस शाला में शरीरिक, मानसिक, बौद्धिक और अध्यात्मिक ऐसे प्रत्येक अंग का विकास आवश्यक मान कर, उस पर विशेष ध्यान दिया जाता है।

वॉरविन जेसॉप जो गत २० वर्षों से संस्कृत पढ़ा रहे है, कहते है कि प्राचीनतम संस्कृत लातिनी और ग्रीक से भी पुरानी है अंग्रेजी सहित, अमेरिका से लेकर आइसलैण्ड और आगे बंगाल तक बोली जाने वाली सारी यूरोपीय भाषाएँ संस्कृत से निकली हुई है। संस्कृत से निकली हुई है। संस्कृत, हजारों वर्षों की भाषा के परिमार्जन, परिष्कृति और परिशुद्धि की प्रखर तपस्या का चरम बिन्दु है। यह विचार को उसकी समस्त सूक्ष्मता सहित व्यक्त कर सकने के लिए रची गयी थी। मानव जाति ऊँचे उठकर गगन को चूमे और दार्शनिक गहराइयों की थाह ले सके, इसलिए हजारों वर्षों की प्रखर परिष्कृति और तपस्या से प्राप्त उपलब्धि संस्कृति है।

जब से नासा के रिक ब्रिग्स ने संस्कृत की प्रशंसा में कहा कि संस्कृत आपके लिए एक विशाल और उन्मुक्त करने वाले आध्यात्मिक साहित्य का द्वार खोल देती है। फिर उस आध्यात्मिकता में आप सरलता से प्रवेश कर सकते हैं। तब से परिचमी शालाओं में भी प्रभूत उत्साह दिखाई देता है। कुछ और स्रोतो से पता चला कि इंग्लैण्ड और अन्य पश्चिमी यूरोप के देशों में प्रायः ८० शालाएँ, संस्कृत का पाठय्क्रम लागू कर चुकी है।

मैं सभी आर्य जनों से एक बार पुनः आग्रह करता हुँ कि आप अपनी देश की संस्कृति की रक्षा हेतु बालकों को गुरूकुल अवश्य भेजें जहाँ विदेशों में इसकी माँग बढ़ रही है वही हम अपने बच्चों को अंग्रेजी भाषा का गुलाम बना रहे हैं जबकी हमारी धरोहर को विदेशी अपना रहे हैं और हम उनकी नकल कर रहे हैं आइए मिलकर हम संस्कृत भाषा द्वारा अपने देश को पुनः विश्व गुरू बनायें।

वेदामृतम्

स्तुता मया वरदा वेदमाता[११], प्रचोदयन्तां पावमानी द्विजानाम्[१२]।
आयुः प्राणं प्रजां पशुं कीर्ति[१३], द्रविणं ब्रह्मवर्चसम्[१४]।।
मह्यं दत्त्वा व्रजत ब्रह्मलोकम्[१५]।। अथर्व १९.७१.१

मैंने गायत्र्यादि-छन्दोमयी वेदमाता का स्तवन किया है। वेदों से मन्त्रों को चुन-चुनकर उनका पाठ किया है, गान किया है, अर्थ-चिन्तन किया है, उसे लेखनी से लेखबद्ध किया है और उसे अपने जीवन में उतारने का प्रयत्न किया है, आप लोग भी वेदमाता का अध्ययन, स्तवन, कीर्तन, अर्चन, गान और अर्थचिन्तन करो तथा उसे अपने जीवन का अंग बनाने का प्रयास करो। वह वेदमाता गायत्री कहलाती है, क्योंकि उसका गान किया जाता है अथवा वह वेद के गायक परमेश्वर - रूप कवि के हृदय से निकली हैं। वह द्विजों को पवित्र करने वाली है। जो आचार्याधीन गुरुकुल-वास कर वेदाध्ययन करने के पश्चात् आचार्य-गर्भ से निकलकर स्नातक बनते हैं, वे द्विज कहलाते हैं, क्योंकि उकना दो बार जन्म होता है- एक बार माता के गर्भ से, दूसरी बार आचार्य के गर्भ से। उन वेदपाठी द्विजों का जीवन वेदमाता के अध्ययन, मनन, तदनुकूल आचरण आदि से पवित्र हो जाता है।

यदि तुम मेरा अनुभव सुनना चाहते हो, तो सुनो। स्तवन-कीर्तन की हुई वेदमाता ने मुझे आयु दी है, स्वस्थ दीर्घजीवन प्रदान किया है। दीर्घायुष्य के वेदमन्त्रों से प्रेरणा लेकर सचमुच मैंने दीर्घजीवन पा लिया है। वेदमाता की प्राण-विषयक सूक्तियों ने मुझे प्राणवान् बनाया है। प्रजनन-सम्बन्धी मन्त्रों ने मुझे उत्कृष्ट प्रजा प्रदान की है। पशुपालन सम्बन्धी मन्त्रों ने पशु-पालन-विद्या की शिक्षा दी है। यशस्विता के प्रेरक मन्त्रों ने मुझे कीर्ति प्रदान की है। धन-प्राप्ति के लिए उत्साहित करने वाले मन्त्रों ने मुझे धन प्रदान किया है। ब्रह्मवर्चस के मन्त्रों ने मेरे आत्मा में ब्रह्मवर्चस भरा है। कहाँ तक गिनाऊँ! विविध विद्याओं का वर्णन करने वाली वेदमाता ने मुझे अपनी सब विद्याएँ हृदयंगम करा दी हैं। इन समस्त ऐश्वर्यों की निधि मुझे देकर वह अहर्निश पुनः-पुनः अधीत् स्तुत एवं अभिपूजित वेदमाता मेरे आत्मलोक में प्रतिष्ठत हो गई है, मेरी आत्मा का अंग बन गई है।

मित्रों आप भी वेदमाता का स्तवन-कीर्तन करो। आपको भी ये समस्त फल प्राप्त होंगे। यह वेद की वाणी है, यह वेद की प्रेरणा है, यह वेदोपनिषद् है।

साभार वेदमञ्जरी

डॉ. धीरज सिंह
कार्यवाहक प्रधान/संरक्षक

स्वामी धर्मेश्वरानन्द सरस्वती
मंत्री/प्रधान सम्पादक

सम्पादकीय.....

अपने वृद्धजनों के प्रति हमारी नैतिक जिम्मेदारी

कुछ समय पहले समाचार पत्रों के माध्यम से तथा टी०वी० चैनलों पर मुम्बई की एक घटना ने सबके दिलों को झकझोर कर रख दिया मुम्बई में रहने वाली एक वृद्ध महिला जिसका बेटा अमेरिका में रहा करता था और कभी–कभी अपनी माँ को फोन कर लिया करता था माँ अकेली दसवीं मंजिल में रहा करती थी बोटा अमेरिका से वापस आया तो कमरे की घण्टी बजायी काफी काफी देर घंटी बजाने के बाद दरवाजा नहीं खुला तब दरवाजा तोड़ा गया और तोड़ने के बाद जो दृश्य दिखने को मिला जिसे देखकर सभी हैरान रह गये सोफे पर केवल माँ का कंकाल मिला इस घटना सबको सोचने पर मजबूर कर दिया कि हमारा व्यवहार अपने माता–पिता के प्रति कितना उदासीन है पोस्टमार्डम रिपोर्ट के अनुसार माँ का शव लगभग दस दिन पहले ही मृत हो गया था तथा बेटे ने एक भी बार उस दस दिन में फोन नहीं किया क्या हमारे पड़ोसियों का कर्तव्य नहीं बनता था कि दस दिन से उस महिला का न मिल पाना न आना जाना यह सब खुदगर्जी को दर्शाता है।

कारण कुछ भी हों लेकिन, नेशनल मेंटल हेल्थ सर्वे की हालिया रिपोर्ट पारिवारिक मूल्यों के विघटन की उन त्रासद स्थितियों को उजागर करती है जो किसी भी समाज के लिए दुखदायी कही जा सकती है। इस रिपोर्ट के अनुसार बुजुर्गों में बारह फीसदी लोग किसी न किसी मानसिक समस्या से ग्रस्त हैं और इसका एक मुख्य कारण परिवार से अलग–थलग होते जाना हैं प्रदेश के किंग जार्ज चिकित्सा विश्वविद्यालय (केजीएमयू) के वृद्धावस्था मानसकि स्वास्थ्य विभाग के स्थापना दिवस पर यह रिपोर्ट सामने रखी गई और विशेषज्ञों का मानना था कि आगे चलकर यह समस्या और विकराल होगी। यह स्थिति इसलिए भी चिंताजनक है क्योंकि पारिवारिक इकाइयों में विखराव बढ़ता जा रहा है। कैरियर की चिंता में युवाओं का सपरिवार घर छोड़कर जाना और अकेले पड़ गए वृद्धजन को सहज माहौल न मिल पाना आज की नियति बनती जा रही है। उन्हें समय से तालमेल बिठाने में भी समस्या हो रही है क्योंकि अपने बचपन में उन्होंने परिवार में बुजुर्गों का प्रभाव और उनके महत्व को देखा–समझा है। अकेलापन स्वतः में एक समस्या है जो वृद्धजन में असुरक्षा की भावना पैदा करती है और उनमें मानसिक रोग बढ़ रहे हैं। इस बात से शायद ही कोई इन्कार कर सके कि बच्चों के सहज विकास में दादा–दादी की प्रमुख भूमिका होती है। दूसरा पक्ष है कि बच्चें से भरे–पूरे परिवार वाले बुजुर्ग अधिका स्वस्थचित्त होते हैं लेकिन, अधिकांश परिवारों में बुजुर्गों को यह माहौल उपलब्ध नहीं है। अकेले वृद्धजन के साथ हो रही आपराधिक घटनाएं भी उनमें असुरक्षा की भावना बढ़ा रही हैं। सार्थक पक्ष यह है कि प्रदेश सरकार ने इसके संवेदनात्मक पक्ष को समझा है और हर जिले में वृद्धाश्रम खोलने जा रही है। इसके साथ ही लंबित पड़े–माता–पिता एवं वरिष्ठ नागरिक कल्याण निधि और काउंसिल का भी गठन किया जा रहा है लेकिन, सिर्फ इतने से ही इस समस्या का समाधान नहीं होगा। इसके लिए समाज में पिरवर्तन लाना जरूरी है। वृद्धजन किसी एक परिवार, नहीं बल्कि पूरे समाज की जिम्मेदारी हैं और यदि किसी एक घर में अकेले निवास कर रहे बुजुर्ग का उनके आस–पड़ोस के लोग ध्यान रखने लगें तो उनमें बए रहे मानसिक रोगों का स्वतः ही उपचार हो जाएगा।

- सम्पादक

गतांक से आगे .....

सत्यार्थ प्रकाश

अथ चतुर्थ समुल्लासारम्भः

अथ समावर्त्तनविवाहगृहाश्रमविधिं वक्ष्यामः

प्रश्न– क्या जिस के माता–पिता ब्राह्मण हों वह ब्राह्मणी ब्राह्मण होता है और जिसके माता पिता अन्य वर्णस्थ हों उन का सन्तान कभी ब्राह्मण हो सकता है?

उत्तर – हां बहुत से हो गये, होते हैं और होंगे भी। जैसे छान्दोग्य उपनिष्द् में जाबाल ऋषि अज्ञातकुल, महाभारत में विश्वामित्र क्षत्रिय वर्ण और मातङ्ग ऋषि चाण्डाल कुल से ब्राह्मण हो गये थे। अब भी उत्तम विद्या स्वभाव वाला है वही ब्राह्मण के योग्य और मूर्ख शूद्र के योग्य होता है और वैसा ही आगे भी होगा।

प्रश्न– भला जो रज वीर्य से शरीर हुआ है वह बदल कर दूसरे वर्ण के योग्य कैसे हो सकता है?

उत्तर– रज वीर्य के योग से ब्राह्मण शरीर नहीं होता किन्तु

स्वाध्यायेन जपैर्होमैस्त्रैविद्येनेज्यया सुतैः।
महायज्ञैश्च यज्ञैश्च ब्राह्मीयं कियते तनुः।। मनु०।।

इस का अर्थ पूर्व कर आये हैं अब यहां भी संक्षेप में करते हैं। (स्वाध्यायेन) पढ़ने पढ़ाने (जपैः) विचार करने कराने नानाविध होम के अनुष्ठान, सम्पूर्ण वेदों को शब्द, अर्थ, सम्बन्ध, स्वरोच्चारणसहित पढ़ने पढ़ाने (इज्यया) पौर्णमासी, इष्टि आदि के करने, पूर्वोक्त विधिपूर्वक (सुतैः) धर्म से सन्तानोत्पत्ति (महायज्ञैश्च) पूर्वोक्त ब्रह्मयज्ञ, देवयज्ञ, पितृयज्ञ, वैश्वदेवयज्ञ और अतिथियज्ञ, (यज्ञैश्च) अग्निष्टोतादि–यज्ञ, विद्वानों का संग, सत्कार, सत्यभाषण, परोपकारादि सत्कर्म और सम्पूर्ण शिल्पविद्यादि पढ़ के दुष्टाचार छोड़ श्रेष्ठाचार में वर्त्तने से (इयम्) यह (तनुः) शरीर (ब्राह्मी) ब्राह्मण का (क्रियते) किया जाता है। क्या इस श्लोक को तुम नहीं मानते? मानते हैं। फिर क्यों रज वीर्य के योग से वर्णव्यवस्था मनते हो? मैं अकेला नहीं मानता किन्तु बहुत से लोग परम्परा से ऐसा ही मानते हैं।

प्रश्न– क्या तुम परम्परा का भी खण्डन करोगे?

उत्तर– नहीं, परन्तु तुम्हारी उलटी समझ को नहीं मान के खण्डन भी करते हैं।

प्रश्न– हमारी उलटी और तुम्हारी सूधी समझ है इस में क्या प्रमाण?

उत्तर– यही प्रमाण है कि जो तुम पांच सात पीढ़ियों के वर्तमान को सनातन व्यवहार मानते हो और हम वेद तथा सृष्टि के आरम्भ से आजपर्यन्त की परम्परा मानते हैं। देखो! जिस का पिता श्रेष्ठ उस का पुत्र दुष्ट और जिस का पुत्र श्रेष्ठ उस का पिता दुष्ट तथा कहीं दोनों श्रेष्ठ वा दुष्ट देखने में आते हैं इसलिए तुम लोग भ्रम में पड़े हो। देखो! मनु महाराज ने क्या कहा है–

येनास्य पितरो याता येन याता पितामहाः।
तेन यायात्सतां मार्गं तेन गच्छन्न रिष्यते।। मनु०।।

जिस मार्ग से इस के पिता, पितामह चले हों उस मार्ग में सन्तान भी चलें परन्तु (सताम्) जो सत्पुरुष पिता पितामह हों उन्हीं के मार्ग में चलें और जो पिता, पितामह दुष्ट हों तो उन के मार्ग में कभी न चलें। क्योंकि उत्तम धर्मात्मा पुरुषों के मार्ग में चलने से दुःख कभी नहीं होता इस को तुम मानते हो वा नहीं?

हाँ हाँ मानते है।

और देखो जो परमेश्वर की प्रकाशित वेदोक्त बात है वही सनातन और उस के विरुद्ध है वह सनातन कभी नहीं हो सकती। ऐसा ही सब लोगों को मानना चाहिये वा नहीं?

अवश्य चाहिए।

जो ऐसा न माने उस से कहो कि किसी का पिता दरिद्र हो उस का पुत्र धनढ्य होवे तो क्या अपने पिता की दरिद्रावस्था के अभिमान से धन को फेंक देवे? क्या जिस का अन्धा हो उस का पुत्र भी अपनी आंखों को फोड़ लेवे? जिस का पिता कुकर्मी हो क्या उस का पुत्र भी कुकर्म को ही करे? नहीं–नहीं किन्तु जो–जो पुरुषों के उत्तम कर्म हों उन का सेवन और दुष्ट कर्मों का त्याग कर देना सब का अत्यावश्यक है।

जो कोई रज वीर्य के योग से वर्णाश्रम–व्यवस्था माने और गुण कर्मों के योग से न माने तो उस से पूछना चाहिये कि जो कोई अपने वर्ण को छोड़ नीच, अत्त्यज अथवा कृश्चीन, मुसलमान हो गया हो उस को भी ब्राह्मण क्यों नहीं मानते? यहां यही कहोगे कि उस से ब्राह्मण के कर्म छोड़ दिये इसलिये वह ब्राह्मण नहीं है। इस से यह भी सिद्ध होता है जो ब्राह्मणादि उत्तम कर्म करते हैं वे ही ब्राह्मणादि और जो नीच भी उत्तम वर्ण के गुण, कर्म, स्वभाव वाला होवे तो उस को भी उत्तम वर्ण के गुण, कर्म, स्वभाव, वाला होवे तो उस को भी उत्तम वर्णस्थ होके नीच काम करे तो उसको नीच वर्ण में गिनना अवश्य चाहिये।

क्रमशः अगले अंक में .....

सुख–दुःख का मूल–उत्पादक मनुष्य स्वयं

–प्रकाश चौधरी

प्रायः ऐसा देखने में आता है कि मनुष्य अपने क्षणिक सुख के लिए लोभवश, बिना बिचारे, बिना परिणाम एवं प्रभावों का विचार किये कर्म किये चला जाता है। कई बार किसी दबाववश, तात्कालिक दण्ड, उपहास या हानि को टालने–वश झूँठ, छल–कपट, हिंसा, चोरी आदि का भी सहारा ले लेता है। ऐसा कर लेने के उपरान्त ईश्वर की ओर से उसे लज्जा, भय, शंका, अशान्ति, चिन्ता आदि की अनुभूति होने लगती है। उसे आभास होने लगता है कि मेरे अमुक दुष्ट कर्म का दण्ड ईश्वर की ओर से मिलेगा। वह नादान उस कर्मफल से बचने हेतु उपाय ढूँढ़ने लगता है। दान, जप, स्नान करता है, पूजा करवाता है, तीर्थ पर जाता है, उपवास करता है और बड़े–बड़े पुजारी, स्वामी, बापू जैसे धर्माधिकारी उसे उपाय भी बताते हैं। ईश्वर को भोग लगवाते हैं। यज्ञ, दान, बलि चढ़ना, पूजा, आराधना आदि अनेकों प्रकार के उपाय बताए जाते हैं। कुछ अज्ञानी एवं दुष्ट अपने को ज्ञानी बताते हुए हुए तान्त्रिक–विद्या का प्रयोग करते हैं। दूसरों को, पड़ोसियों को कारण बताकर उपाय सुझाते हैं।

हमारी वैदिक संस्कृति और हमारा सिद्धान्त ऐसा नहीं कहता। उसके अनुसार "अश्वयमेव भोक्तव्यं कृतं कर्म शुभाशुभम्", अर्थात् किये अुए शुभ कर्म या अशुभ कर्म का फल भोगना ही पड़ता है। तो फिर उपाय क्या है?

वैदिक सिद्धान्त के अनुसार, ऋषि मुनियों के गहन अध्ययन के अनुसार बुरे कर्मों से बचने हेतु स्वाध्याय, सत्संग, शंका–समाधान, चर्चा आदि के द्वारा प्रथम तो हमें यह जानना चाहिए कि अच्छे कर्म क्या हैं, कौन से हैं और बुरे कर्म कौन से हैं। कहा गया है कि ऐसे कर्म जो लज्जा अनुभव कराएँ, वे बुरे कर्म हैं और जिनसे प्रसन्नता का अनुभव हो और शान्ति की प्राप्ति हो, वे शुभ कर्म हैं। अच्छे व बुरे कर्म की पहचान ज्ञान करवाता है। विद्या ही अविद्या को दूर करने का उपाय है। ज्ञान के उपरान्त बुरे कर्मों को न करने का संकल्प लेना चाहिए। सतर्क रहकर उसके परिणामों, प्रभावों का विचार करते रहना चाहिए। मुख्यतया ईश्वर की नित्य स्तुति–प्रार्थना व उपासना करके प्रभु से साहस, बल पराक्रम प्राप्त करके कर्मों के विषय में निर्णय लेना चाहिए। आज–कल तो ज्ञान, कर्म, उपासना आदि और अनेकों योग के कार्यक्रम टी.वी. पर दिखाए जाते हैं।

अब प्रश्न उठता है कि कर्म और कर्मफल क्या है? कर्मों का फल कब और कैसे और कितना मिलता है? सब जानते हैं कि फल ईश्वर देता है। कुछ को तो यह भ्रान्ति है कि कर्म ईश्वर की प्रेरणा से ही किया जाता है, फिर फल क्यों? परन्तु ऐसा नहीं है। वैदिक सिद्धान्त के अनुसार जीव कर्म करने में मुक्त और फल पाने में परतन्त्र है। मनुस्मृति, योदर्शन, गीता आदि अनेक ग्रन्थों में कर्म और फल की अलग–अलग रूप से परिभाषाएँ दी गई हैं, पर सार सभी परिभाषाओं का एक ही है– सकाम कर्म और निष्काम कर्म। जीवात्मा अपनी इच्छा, ज्ञान तथा प्रयत्न से शरीर (साधन) द्वारा पाप और पुण्य के कार्य करता है, जो सकाम और निष्काम कर्म कहलाते हैं। सकाम कर्म उन कर्मों को कहते हैं, जो लौकिक फल अर्थात् धन, पुत्र, यश आदि की इच्छा से किये जाते हैं। दूसरे निष्काम कर्म मनुष्य के परम लक्ष्य 'मोक्ष प्राप्ति' हेतु किये जाते हैं। सकाम कर्मों को तीन भागों में बाँटा है–

१.अच्छ कर्म–सेवा, दान, परोपकार आदि।

२. बुरे कर्म– झूँठ, चोरी, छल–कपट आदि।

३. मिश्रित कर्म – खेती, उद्योग, करना आदि।

परन्तु निष्काम कर्म सदा अच्छे होंगे, इनका फल ईश्वरीय आनन्द की प्राप्ति के रूप में होता है, जीवित अवस्था में समाधि रूप में, मृत्यु उपरान्त मोक्ष रूप में। लेकिन सकाम कर्मफल इस जीवन में भी व मृत्यु उपरान्त भी भिन्न–भिन्न योनि, भोग और आयु के रूप में भोगा जाता है।

जो कर्म इस जन्म में फल दने वाले होते हैं, उनको "दृष्टजन्म वेदनीय कर्म" कहते है और जो अगले जन्म में फल देने वाले होते हैं उन्हें 'अदृष्टजन्म वेदनीय कर्म' कहते हैं। सकाम कर्मों के तीन प्रकार के फल हैं– जाति, आयु, भोग। जाति में तमाम योनिया पशु, पक्षी, मनुष्य आदि और इन्हीं योनियों के अनुसार आयु–भोग प्राप्त होते हैं। इन तीन अवस्थाओं में जो सुख–दुःख प्राप्त होता है वही वास्तव में कर्मों का फल है। दृष्टजन्म वेदनीय कर्म आयु व भोग का फल तो दे सकते हैं, लेकिन जाति का फल नहीं दे सकते। जैसे अच्छा आहार, बिहार, निद्रा, ब्रह्मचर्य, व्यायाम, योग आदि के सेवन से हम स्वस्थ्य, निरोगी आयु को बढ़ाने वाले हष्ट–पुष्ट हो सकते हैं और विपरीत अवस्था में विपरीत फल के भोगी होंगे, परन्तु जो जाति हमें अब प्राप्त है उसको हम कभी नहीं बदल सकते, क्योंकि ये योनि पूर्वजन्म के कर्मफल के अनुसार प्राप्त हो चुकी है। इस जनम का किया गया कर्म अगले जन्म में जातिफल के रूप में जब मिलेगा तो वह अदृष्टजन्म वेदनीय कहलाएगा। शास्त्रों में कर्मफल को कर्माशय कहा गया है। जीवन में कर्मों का फल मिलकर जाति–आयु–भोग प्रदान करते हैं, उनमें महत्वपूर्ण फल जाति है, उस पर आयु और भोग आधारित हैं। ये जाति भी अच्छे और निम्न स्तर की हो सकती है। कोई मूर्ख है, कोई विकलांग है, कोई सुन्दर है, कोई कुरूप है, बुद्धिमान है आदि–आदि। कोई पशु–पक्षी की जाति प्राप्ति करता है। इसी प्रकार आयु मनुष्य की १०० वर्ष, पशु २५ वर्ष, की–पतंग ४ से ६ मास, पक्षी २ से ४ वर्ष आदि–आदि। भोग भी जाति के अनुसार मिलता है। मनुष्य अपनी बुद्धि से सब सुखों के साधन जुटाता है, बाकि पशु–पक्षी अपनी–अपनी योनियों के अनुसार प्राप्त करते हैं आयु व भोग घट–बढ़ सकते हैं पर सीमा के अन्दर।

सभी कर्मों के फल आवश्यक नहीं कि एक ही समय में मिल जाएं। कभी साथ मिलकर फल देते हैं, कभी दबे रहते है। लुप्त हो जाते हैं। लम्बे समय के उपरान्त जिन–जिन कर्मों की प्रधानता हो जाती है, उसके अनुसार फल रूप में जन्म मिलता है बाकि शेष कर्म संचित कर्मों में जुड़ते जाते हैं। जब तक उसी प्रकार के कर्मों की प्रधानता नहीं हो जाती, ये दबे हुए या संचित कर्म रूप में रहते हैं।

अन्त में सार निकलता है कि इस जन्म में दुःखों से बचने के लिए और सुख की वृद्धि के लिए हमें सदा शुभ कर्म ही ही करते रहना चाहिए और उनको भी निष्काम भावना से। ये कैसे हो? परमात्मा की स्तुति–प्रार्थना और उपासना करते हुए अपने अशुभ कर्मों की प्रवृत्तियों की मैल को धोया जाए। रात्रि को सोने से पूर्व अपना आत्मनिरीक्षण हो, जीवन को यज्ञ रूप मानते हुए उसमें शुभ कर्मों की समिधाएँ डालें ताकि परोपकार से यश प्राप्त हो। उसकी सुगन्धि से जीवन सुगन्धित हो। प्रतिदिन के अभ्यास से मल छूट जाएगा। प्रभु से भय हो, प्रभु को साक्षी मानकर हम सत्य पर चलें। कहते हैं ५० प्रतिशत भी यदि शुभ कर्म अच्छे हों तो मानव जीवन मिलता है, शेष ५० प्रतिशत के लिए फिर से परीक्षा की तैयारी करनी होगी। शुभ कर्म करके १०० प्रतिशत अंक हम पावें और मोक्ष रूपी लक्ष्य को प्राप्त करें, ऐसी हम सब मिलकर कामना करें।

शरीर, मन, इन्द्रियों का स्वामी जीवात्मा है। जैसा मन से विचार करता है, वैसा वाणी से बोलता है, जैसा वाणी से बोलता है वैसे ही आचरण करता है, जैसा आचरण करता है उसी के अनुरूप सुख–दुःख प्राप्त करता है, जैसा आचरण करता है उसी के अनुरूप सुख–दुःख प्राप्त करता है, परिणाम, प्रभाव करता है उसी के अनुरूप सुख–दुःख प्राप्त करता है, परिणाम, प्रभाव प्राप्त करता है, अर्थात् सुख–दुःख का मूल उत्पादक वह स्वयं ही है।

अग्नि और जल संसार के सब व्यवहारों के कारण हैं, इस से गृहस्थजन विशेष कर अग्नि और जल के गुणों को जानें और गृहस्थ के सब काम सत्य व्यवहार से करें। –महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.२४

जब तक सब की रक्षा करने वाला धार्मिक राजा वा आप्त विद्वान् न हो तब तक विद्या और मोक्ष के साधनों को निर्विघ्नता से पाने के योगय कोई भी मनुष्य नहीं होता है और न मोक्ष सुख से अधिक कोई सुख है। –महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.५२

मनुष्यों को चाहिये कि अपने पुरुषार्थ से सुवर्ण आदि धन को इकट्ठा कर घोड़े आदि उत्तम पशुओं को रक्खें क्योंकि जब तक इस सामगग्री को नहीं रखते तब तक गृहाश्रमरूपी यज्ञ परिपूर्ण नहीं कर सकते इसलिये सदा पुरुषार्थ से गृहाश्रम की उन्नति करते रहें।

–महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ – ८.६३

हैदराबाद सत्याग्रह का रक्तरंजित पृष्ठ- निजाम शाही का पहला प्रहार

(भाई श्यामलाल जी की शहादत)

भाई श्यामलाल जी पर पूर्व में भी अनेक झूठे आरोप लगाये थे। इस बार का दंगा– मानो पुलिस को बहाना मिल गया, उन्हें पकड़ने का। उसने श्यामलाल जी को पकड़ कर बीदर की जेल में बन्द कर दिया। बीदर की जेल में उन पर अमानवीय अत्याचार किये गये। एक वर्ग का प्रतिनिधित्व होने के उपरांत भी उन्हें सामान्य कैद से भी बदतर सलूक किया गया। यह निजाम की शासन–व्यवस्था स्तर के घटिया स्तर को दर्शाता है। वे कुष्ठ से पीड़ित थे, लेकिन उनके साथ जेल में किसी भी प्रकार की इंसानियत नहीं बरती गयी। डॉक्टरों के अनुसार उन्हें भोजन में सिर्फ दूध और फल देने के लिए कहा गया था, लेकिन वहां के क्रूर जेलर आबूअयूब ने उन्हें अन्य कैदियों की तरह ज्वार की रोटियां खाने के लिए मजबूर कर दिया। वे कई बार भूखे भी रहे। कैदियों ने उनके लिए भूख हड़ताल भी की, लेकिन नृशंस जेलर ने दूध और मौज (केला) खिलाने की व्यवस्था नहीं की।

आबूअयूब जनता था कि भाई श्यामलाल निजाम के लिए सरदर्द बने हुए हैं। वह उन्हें सफाई से खत्म करना चाहता था। इसी उद्देश्य से उसने भाईजी को सामुदायिक कैदियों की कोठरी से निकालकर उन्हें अन्य जनाना वार्ड को खाली करवारकर एकान्त में रखा। उनके साथ एक किशोर कैदी को रखा गया। सख्त रोटियां और मिर्च से भरी दाल उनको जबरदस्ती खिलाई जाती थी। खाने से इंकार करने पर उनके मुंह में बलात् अन्न ठूंसा जाता। रोगस्त होने पर भी उनके पैरों में बेड़ियां पहनाई गयीं तथा जबरन जूते उतरवा लिये गये, जिसके कारण उनके पैरों में जख्म हो गये।

विनायकराव विद्यालंकार ने इस बार डायरेक्टर ऑफ जनरल के पास शिकायत की। जांच करने पर उन्हें दूध और मौज (केला) का भोजन दिया गया, पर दूसरे ही दिन डॉक्टरों ने आपके लिए दवाई भेजी है कहकर उन्हें दवाई के नाम पर जहर दे दिया गया। रात भर उल्लिटयां और पेट में भारी दर्द के कारण उनके प्राण पखेरू उड़ गये। जेलर ने देखा तो भाई श्यामलाल का मृत देह अस्त–व्यस्त पड़ा हुआ था। सारा समाज भाई श्यामलाल जी की अचानक मृत्यु से स्तब्ध रह गया। निजाम की नींद हराम करने वाले भाईजी को निजाम की नाझी पुलिस ने हमेशा–हमेशा के लिए मौत की नींद सुला दिया।

दिनांक १६.१२.१९३८ की इस दर्दनाक घटना से देश–विदेश की आर्यसमाजों में खलबली मच गयी। निजाम की चहुँ ओर निंदा होने लगी।

उन दिनों शोलापुर में आर्य महासम्मेलन की तैयारियां हो रही थीं। बीदर की जेल से भाईश्याम लाल जी का शव पुलिस के चुस्त बन्दोबस्ती के बावजूद बड़ी होशियारी से प्राप्त कर शोलापुर लाया गया। शव के प्राप्त करने में श्री रुचिराम जी का बड़ा योगदान रहा। उन्होंने हैदराबाद से हैदरी के हस्ताक्षर का नकली टेलीग्राम बीदर को भेजकर श्यामलाल जी का शव उनके संबन्धी श्री दत्तात्रय प्रसाद जी को देने के लिए लिखा। पत्र के अनुसार शव दत्तात्रय प्रसाद जी को दिया गया। दत्तात्रय प्रसाद जी शव को लेकर लॉरी से शोलापुर पहुंच गये। वहां डॉ० नीलकण्ठराव आई०एम०एस० के द्वारा शव का परीक्षण करवाया गया। डॉ० नीलकण्ठ के अनुसार भाई जी की मृत्यु विष से हुई थी। शरीर पर अनेक जगह घाव दिखाई देते थे।

शोलापूर सम्मेलन में भाईजी की मृत्यु से एक ओर रोष पैदा हो गया था, तो दूसरी ओर चेतना का समुद्र उमड़ पड़ा। शोलापुर सम्मेलन में भाई श्यामलालजी की सन्देहात्मक मृत्यु पर निजाम सरकार के खिलाफ निन्दजनक प्रस्ताव पारित किया गया और सरकार से मांग की गयी कि इस मृत्यु की निष्पक्ष जांच कराई जाए। निाज सरकार ने निष्पक्ष जांच कराना तो दूर, इस प्रस्ताव को यह कहकर ठुकरा दिया कि भाई श्यामलाल जी की मृत्यु के लिए वह जिम्मेवार नहीं है। सरकार की ओर से उन्हें उचित भोजन दिया जाता था और उनके साथ कोई दुर्व्यवहार नहीं किया जाता था।

इस दुर्घटना ने यह सिद्ध कर दिया कि सरकार हिन्दुओं के साथ अत्याचार की हद लांघ चुकी है। राज्य में और बाहर इस घटना से यह विचार प्रबल होने लगा कि शासन के अधिकारियों के अत्याचार के विरोध के लिए क्या पग उठाया जाए। भाई श्यामलालाजी की शहादत से अजमंजस में पड़े आर्य सत्याग्रही, जिसमें वीर सावरकर उपस्थित थे, सर्वानुमति से निजाम सरकार के खिलाफ आर्य सत्याग्रह की घोषणा की गयी।

हरिश्चन्द्र आर्य
अधिष्ठाता-उपदेश विभाग
प्रचार कार्यालय-अमेराहा,
फोन- 05922-263412

डॉ० अशोक कुमार आर्य
संपादक-आर्यावर्त केसरी,
अमरोहा
मो० 9412139333

शंका समाधान

– मदन रहेजा

शंका जीवन क्या है? इसका क्या महत्त्व है?

समाधान– जन्म और मृत्यु के बची का समय 'जीवन' कहलाता है। मनुष्य–योनि में जीव को भोग और योग प्राप्त होता है। मनुष्य–जीवन बड़ा महत्त्वपूर्ण है। जीवन में ही सब प्रकार के शुभाशुभ कार्य होते हैं, जिनके फलस्वरूप जीव की उन्नति या अवनति निर्भर होता है। इस जीवन में अगर कुछ नहीं किया तो उस व्यक्ति का अना–जाना कोई महत्त्व नहीं रखता, उसका जीवन बेकार होता है। जीवन में जीने की कला को सीखना चाहिए, आशावादी बनना चाहिए। जीवन का हर पल, हर क्षण राजी–खुशी, प्रेम स, ईश्वर का धन्यवाद करके गुजारना चाहिए। जीवन का महत्व तभी है जब संसार से विदा हों तो लोग हमारे किये को याद करें सराहें। जो कर्म हमने अधूरा छोड़ा उसको लोग पूरा करें। जिसका यश कीर्ति सदा रहती है उसी का जीवन सफल है, वरना कई आए और गए। कोई–कोई पूजे जाते हैं। जो पूजे जाते हैं, बस वे ही पूजे जाते हैं।

जन्म और मृत्यु क्या हैं? किसको आती है?

समाधान– ईश्वर को व्यवस्थानुसार आत्मा का शरीर धारण करना जन्म कहाता है और आत्मा का शरीर छोड़ना मृत्यु कहलाता है। जो वस्तु उत्पन्न होती है वह उसका जन्म है, और जो उसका अन्त है बस वही उस वस्तु की मृत्यु है। जन्म और मृत्यु से ही सृष्टि में सबका संतुलन बना रहता हैं सबका केवल जन्म होता रहे और मृत्यु किसी को न हो तो व्यवस्था नहीं रह सकती, अतः जन्म और मृत्यु अनिवार्य हैं। ईश्वर को यह (प्राकृतिक नियम) व्यवस्था अनादि है और अनन्त है।

पंचमहाभूतों से बना शरीर जड़ है, परन्तु आत्मा के संयोग से चेतन–सा दिखता है। आत्मा के निकलते ही फिर जड़ता को प्राप्त होता है। आत्मा चेतन है। उसका न तो जन्म होता है और न ही उसकी मृत्यु होती है, क्योंकि वह अनादि हैं, अतः अन्तरहित है, नित्य है।

मृत्यु संसार का सबसे बड़ा आश्चर्यजनक रहस्य है जिसको समझने के लिए मनुष्य हर प्रकार की कोशिश करता है। वह प्रकृति के रहस्य जानने में रहता है कि शायद अन्त में मृत्यु का रहस्य प्रकट हो जाए परन्तु यह भौतिक वस्तु नहीं है। आत्मा अमर है, अतः मृत्यु केवल शरीर को ही आती है। शरीर काम करना बन्द कर देता है तो समझो वह मर गया है। शरीर में काम करने वाला तत्त्व आत्मा है जिसके आने से जन्म होता है और जिसके निकल जाने से मृत्यु होती है।

जीवन क्या है? इसका क्या महत्त्व है?

समाधान–

जन्म और मृत्यु के बची का समय 'जीवन' कहलाता है। मनुष्य योनि में जीव को भोग और योग प्राप्त होता है। मनुष्य–जीवन बड़ा महत्त्वपूर्ण है। जीवन में ही सब प्रकार के शुभ – अशुभ कार्य होते हैं।, जिनके फलस्वरूप जीव की उन्नति या अवनति निर्भर होती है। इस जीवन में अगर कुछ नहीं किया तो उस व्यक्ति का आना–जाना कोई महत्तव नहीं रखता, उसका जीवन बेकार होता है। जीवन में जीने की कला को सीखना चाहिए आशावादी बनना चाहिए। जीवन का हर पल, हर क्षण राजी–खुशी, प्रेम से ईश्वर का धन्यवाद करके गुजारना चाहिए। जीवन का महत्तव तभी है जब संसार से विदा हों तो लोग हमारे किये कार्यों को याद करें सराहें। जो कर्म हमने अधूरा छोड़ा उसको लोग पूरा करें जिसका यश–कीर्ति सदा रहती है उसी का जीवन सफल है, वरना कई आए और गए। कोई –कोई पूजे जाते हैं। जो पूजे जाते हैं, बस वे ही पूजे जाते हैं।

आयुर्यज्ञेन कल्पताम्

(यज्ञ हुआ आजीवन हुआ न जीवन यज्ञ)

– देव नारायण भारद्वाज

दो मित्र उद्यान में बैठकर बात कर रहे थे, और अपने पूर्वजों की महिमा का बखान कर रहे थे। क्षितिज की ओर देखकर एक बोला– हमारे बाबा ने इतना बड़ा इतना बड़ा दालान बनवाया था, जो क्षितिज से भी आगे निकला हुआ था। दूसरा बोला हमारे बाबा भी बड़े चमत्कारी थे। उन्होंने इतना लम्बा, इतना लम्बा बाँस बनाया था, जिसकी सहायता से आकाश में घूमकर बादलों से बरसा करवा लेते थे। पहले मित्र ने यह सुनकर पूँछ लिया– वे उस बाँस को रखते कहाँ थे? दूसरे मित्र ने सहज भाव से उत्तर दिया – इसमें क्या कठिनाई, वे उसे रखते थे–तुम्हारे बाबा के दालान में। यह बात आज भी उन लोगों पर सटीक बैठती है, जो बड़े गर्व के साथ कह दिया करते हैं –हमारे बाबा जी पक्के आर्य समाजी थे। उनका हवन कुण्ड विशाल था, और उसकी धूम आसमान तक जाती थी। ऐसी एक घटना का मुझे सामना करना पड़ा।

सवर्ण वर्गीय सामाजिक संस्था के अधिकारीगण पर्व विशेष पर स्मारक पार्क में मुझसे यज्ञ का आग्रह करते चले आ रहे थे। वह दिन आ गया और मैं वहाँ पहुँच गया। पार्क की भीड़ में यत्र–तत्र सजधज के साथ एक शीर्ष व्यक्तिव यहाँ–वहाँ वार्ता व्यस्त थे, वे समाज के सर्वाधिक सम्पन्न जनों मे से एक थे। मैं जब यजमान के आसन को भरने के लिए आह्वान करने लगा, तो अधिकारियों ने उन्हीं महानुभाव को लाकर बैठा दिया। पहले से ही बैठे स्त्री–पुरूषों के समूह को हर्ष हुआ, और उन्हें यजमान पद प्राप्ति का गर्व हुआ। उन्हें देखकर यज्ञारम्भ की मेरी प्रक्रिया इसलिए रूक गयीं, क्योंकि वे मुख में पूरा पान चबाते हुए आसन पर बैठ गये। वे मुझे भला क्या जानते होंगे, जो मैं सीधे उनसे मुख शुद्धि के लिए सचेत करता। यह कार्य मैंने मुख्य पदाधिकारी के माध्यम से कराया। आशीर्वाद शान्ति पाठ सहित यज्ञ पूर्ण हुआ। वेदी पर तो उन्होंने मुझे दक्षिणा दी नहीं, किन्तु एक कक्ष में खड़े होकर संकेत से मुझे बुलाया और हाथ में दक्षिणाराशि निकालते हुए बताना प्रारम्भ किया– मेरे बाबा पक्के आर्य समाजी एवं निष्ठावान याज्ञिक थे। लम्बी रेल यात्राओं में भी नित्यकर्म से निवृत होकर यज्ञ अवश्य करते थे, इसके लिए उनकी यज्ञ पेटिका साथ चलती थी। मैंने कहा बहुत सुन्दर। 'वयं स्थाम वतयो रयीणाम्' (ऋ.१०.१२१.१०) के जाप से ही तो आप धनैश्वर्यों के स्वामी बने हैं। मैंने मन में सोचा–आपने बाबा के धन को तो पकड़ लिया किन्तु यज्ञ–ऐश्वर्य को छोड़ दिया।

यज्ञ करने से भी क्या होता है। सर्वांश में नहीं, अधिकांश में यज्ञ करने वाले 'स्वाहा–इदन्नमम'' का उच्चारण करते हुए घृत–सामग्री की आहुतियाँ लगाते रहते हैं तथा इसकी सुगन्ध को भी फैलाते रहते हैं, और इस प्रकार वे बाह्य वातावरण को तो शोधित कर लेते हैं किन्तु इसके सार स्वत्व से अपने अन्तःकरण की परिशोधन प्रक्रिया पर किञ्चित ध्यान नहीं देते हैं, और जो मन्त्रोच्चारण करते हैं, उससे उनका आचरण उत्कृष्ट न होकर कृष्ट या निःकृष्ट ही बना रह जाता है। यही कारण है कि घर–परिवार हो अथवा संगठन सर्वांश में नहीं तो अधिकांश में देव पूजा (बड़ो का मान) पारस्परिक संगतीकरण एवं दान के दुरूपयोग के उदाहरण परिलक्षित होते हैं। इसी यज्ञ–वेदी पर सरदार अर्जुन सिंह, पौत्र सरदार भगत सिंह, पं० रामप्रसाद बिस्मिल ही नहीं पूर्वज आर्य मनीषियों ने प्रेरणा–प्रोत्साहन प्राप्त कर वेदोत्थान व राष्ट्र–निर्माण के लिए अपने जीवन अर्पित कर दिये थे, उनके समपर्ण की नींव पर संगठन का प्रासाद तो खड़ा हो गया, किन्तु आज उसकी दीवालों में लगी दीमक से रक्षा करने वाली की प्रतीक्षा बनी रहती है।

स्थिति इतनी निराशा जनक भी नहीं है। जैसे एक मछली सारे तालाब को गन्दा कर देती है, और जैसे एक बूँद विष सम्पूर्ण दुग्ध–घट को विषैला कर देती है, वैसे ही थोड़े स्वार्थी अभियोगवादियों ने विराट संगठन को विघटन का जामा पहना दिया लगता है, अन्यथा आज भी गुरूकुल, व शिक्षा जगत के आचार्य ब्रह्मचारी उपदेशक राष्ट्र में अपने आदर्श से आर्यकरण के अभियान में लगे हैं। देश–विदेश राष्ट्र संघ सर्वत्र विश्व–अहिंसा दिवस, विश्व योग दिवस, वेद संहिता संरक्षण, अग्नि होत्र एवं शाकाहार दिवस आदि के रूप में सात्विक संस्कार जागरण के अभियान चल पड़े हैं।

यज्ञनिष्ट लोग चलती ट्रेन में भी अपना दैनिक यज्ञ कर लेते हैं वैसे ही रामायण प्रेमी लोग भी प्रभावित काल में स्वच्छ होकर रामायण का पाठ करके ही सुखशान्ति अनुभव करते हैं। मन्त्रों के अर्थों को समझना पड़ता है पर रामायण तो लौकिक भाषा में अर्थ स्पष्ट करती चलती है। यह सहज सुबोध अर्थ भी जीवन व्यवहार में उतरना दुर्लभ होता है। इसमें भी आर्योपदेशक यदा कदा मार्गदर्शन करते देखे जाते हैं। प्रयाग राज एक्सप्रेस के आरक्षण श्रेणी में ऐसे ही एक यात्री अपनी सीट पर बैठकर उच्च स्वर में रामायण का पाठ करते जा रहे थे और भाव विह्वल होकर आँसुओं की लड़ी बहाते जा रहे थे। यह देखकर उपदेशक महोदय ने उनकी रामयण–निष्ठा की प्रशंसा की और पाठ–प्रसंग जानने की इच्छा की। रामायणी जी ने बताया – इस समय राम–भरत मिलाप का प्रसंग चल रहा है। निश्छल प्रेम प्रवाह को अनुभव कर मेरे नेत्रों से अश्रु प्रवाह हो गया। अच्छा तो आप प्रयाग राज तीर्थ में त्रिवेणी–स्नान के लिए जा रहे होगें। यात्री ने कहा नहीं। अच्छा तो पवित्र भारद्वाज आश्रम दर्शनार्थ जा रहे होंगे। यात्री ने कहा नहीं। प्रादेशिक शिक्षा निदेशालय या राज्य लोक सेवा आयोग मुख्यालय में किसी काम से जा रहे होंगे। यात्री ने कहा– नहीं। फिर तो प्रयाग राज विश्वविद्यालय में अपने किसी प्रोफेसर मित्र से मिलने जा रहे होंगे। यात्री ने कहा–नहीं, और आगे प्रसंग को न बढ़ाते हुए वे बाले पड़े। महाशय! आपको पता नहीं प्रयाग राज में उच्च न्यायालय भी है। मैं वहीं जा रहा हूँ। उपदेशक जी बोले तो आप प्रयागराज नहीं इलाहाबाद जा रहे हैं।

अच्छा तो यह बताइए वहाँ आपका क्या प्रकरण लम्बित चल रहा है? क्या बतायें बड़े भाई से एक लघु भूखण्ड के लिए अभियोग चल रहा है। दसियों वर्ष हो गये–निर्णय नहीं हो पा रहा है। पड़ोस में रहते हुए भी बोल– चाल बन्द है। उपदेशक जी ने कहा–राम–भरत मिलाप से तो आप इतने प्रभावित हैं कि अश्रुपात कर बैठते हैं आपने कभी सोंचा है कि अयोध्या जैसे चक्रवर्ती साम्राज्य के सिंहासन को दोनों भाईयों ने गेंद के समान ठोकर मारते हुए खेल बना दिया था। भरत ने अयोध्या से दूर नन्दीग्राम में एक तपस्वी के रूप में राम की प्रतीक्षा करते हुए शासन संचालन किया था। एक ओर राम–भरत की मिलाई पर भावुकता वश रूलाई करते है और अपने ही बड़े भाई से लड़ाई करते हैं। मेरा परामर्श है आगे से या तो रामायण की पढ़ाई बन्द या बड़े भाई से लड़ाई बन्द। स्टेशन आया। उपदेशक जी ने उतरते उतरते आर्य समाज चौक जाने की बात करते हुए विदाई ली। न्यायालय पहुँचने पर बड़े भाई जी वहाँ उनकी प्रतीक्षा करते मिले। दसियों वर्ष बाद छोटे भाई ने बड़ेभाई के चरण पकड़े और क्षमा याचना की और बोले आज से भूखण्ड आपका है। अभियोग सामप्त होता है। मुझे आपक अखण्ड प्रेम चाहिये–भूखण्ड नहीं। अब साथ–साथ हँसते हुए वापस लौटेंगे। पहले आर्य समाज चौक चलकर उपदेशक जी से मिलकर उनका आभार व्यक्त करते हैं। दोनों भाई वहाँ जाकर उपदेशक से मिलते हैं। उन्हीं के समक्ष बड़े भाई घोषणा करते हैं कि छोटे भाई का परिवार बड़ा है– इन्हें आवश्यकता है इसलिए भूखण्ड इनके परिवार के लिए छोड़ता हूँ। आर्योपदेशक ने प्रत्यक्ष घटित कर दिया–भरत मिलाप।

उस संन्ध्या उपदेशक महोदय ने जिस प्रवचन को प्रस्तुत किया, वह निम्नांकित मञ्च पर आधारित था। प्रयाग में यज्ञ चर्चा यूँ हुई–

आयुर्यज्ञेन कल्पतां प्राणो यज्ञेन कल्पतां चक्षुर्यज्ञेन।
कल्पतां श्रोत्रं यज्ञेन कल्पतां पृष्ठ यज्ञेन कल्पता यज्ञो यज्ञेन कल्पताम्।
प्रजापतेः प्रजाऽअभूम स्वर्देवाऽअगन्मामृताऽअमूम।।
(यजु० ६.२१)

भावार्थः हमारा सम्पूर्ण जीवन यज्ञ से श्रेष्ठ कर्म से समथ हो प्राणों की शक्ति, दर्शन शक्ति, श्रवण शक्ति, पृष्ठ–पीठ सभी यज्ञ से समर्थ हों। हमारे सभी क्रिया कलाप यज्ञ से समर्थ हो। हम प्रजापति परमेश्वर की सच्ची प्रजा बनें। स्वयं देवस्वरूप बनकर अपने को ही नहीं अन्यों को भी सुखी बनाने में समर्थ हों तथा जीवन मुक्ति के साथ अमृतत्व को प्राप्त करें। हम ऐसे उत्तम कर्म करें कि विद्वानों से हमें सदैव शावाशी मिलती रहे। हम अपने जीवन को यज्ञ का आकार–प्राकर देते हुए प्रभु–प्रजा सभी को प्रसन्न बनाने के लिए क्षमता भर उद्यत रहें। यज्ञ को आचमन से आरम्भ करने वाले याज्ञिक जल के अमृत रूप को समझ कर नित्य ब्रह्मामृत में सराबोर होने की कामना करते हुए स्वाहा का सुख बोधन करते हैं।

उस दिन यह यज्ञ क्रिया फलित होती देखी गयी, जिस दिन सन्त एकनाथ पैदल गंगोत्री से कन्धे पर गंगाजल की कांवर लेकर रामेश्वर जी पर चढ़ाने जा रहे थे। उन्होंने वही जल मरूस्थल में प्यास से तड़पते गधे को पिला दिया, और वह उठकर चल दिया। साथी साधुओं की निन्दा नकारने में सन्त एक नाथ ने क्षण भर की देर नहीं लगायी। देखो साक्षात गंगाधर रामेश्वर भगवान यहीं तृप्त होने आ गये और मुझे कांवर के बोझ से मुक्त कर दिया।

क्या आपको नहीं लगता –''स विशोऽनुव्यचलत्'' (अर्थव १५.६.१) वह वात्य परमात्मा ऐसे आस्थावान् भक्तों की ओर विचरणशील हो जाता है। धर्मराज युधिष्ठर–योगिराज कृष्ण की भाँति ही यज्ञ प्रेमी थे। राजसूय यज्ञ इसका संकेतक है। उनके जीवन में यज्ञ ज्योति जज्वल्यमान थी। महाभारत जैसे युद्ध के मध्य भी वे लड़ाई के बाद रात्रि में वेश बदल कर घायल सैनिकों की पीड़ा कम रकने के लिए युद्ध क्षेत्र में चले जाते हैं। एक दिन अनुज सहदेव ने इसनिमित्त उन्हें वेश बदलते देख लिया और कहा– यह तो ठीक है कि आप घायलों की वेदना कम करने के लिए जाते है, किन्तु वेश क्यों बदलते हैं? उन्होंने कहा कि यदि मैं अपने असली वेश मैं लाऊँगा, तो शत्रु सैनिक मेरी इस सेवा को ठुकरा सकते हैं। उस दिन सहदेव ने भी यज्ञ–धर्म के रहस्य को समझ लिया था। हमने भी स्वाहा को कितना सराहा–आइए विचार करें।

युग प्रवर्तक–गुरू–शिष्य

–पं० उम्मेद सिंह विशारद

गुरू स्वामी विरजानन्द जी एवं योग्य शिष्य दिव्य विभूति दयानन्द सरस्वती जी
सत्य वैचारिक, आध्यात्मिक सामाजिक सुधार व स्वतन्त्रता क्रान्ति के पुरोधा

गुरू श्री दण्डी स्वामी बिरजानन्द सरस्वती–

सोते संसार को जगाने वाले महर्षि दयानन्द के गुरू विरजानन्द जी का नाम इतिहास के स्वर्ण अक्षरों में उल्लेखनीय हैं। आपने ही संसार को अज्ञान गर्त्त में पड़ने से बचाया और अस्त हुए, वेद सूर्य को फिर से संसार में चमकाया। जब तक सूर्य और चन्द्रमा प्रकाशवान है, तब तक मानव आकाशमण्डल में बिरजानन्द सूर्य भी चमकता रहेगा।

वेद श्रोत्र की खोज गुरू विरजानन्द जी ने की थी। ऋषि मुनियों के प्राचीन संसार को वास्तिविक श्रोत्र वेद की वास्तविकता को कैसे जान सकते थे, श्री विरजानन्द ने पारस पत्थर के सद्दश्य अष्टाध्यायी– महाभाष्य–निघन्टु–और निरूक्त शास्त्रों की खोज की। इसलिए गुरू विरजानन्द जी का नाम संसार के इतिहास में सदैव सम्मान पूर्वक लिया जायेगा। इसके कारण ही संसार को पता चला कि वेदों में मूर्ति पूजा, मनुष्य पूजा, अग्नि और महाभूतों की पूजा नहीं है। ऋषियों की भाषा और वेदों के अर्थ समझने के लिए प्रत्येक अन्वेषक को इस पारसमणि की आवश्यकता है। इन शास्त्रों के बिना, विद्वान मैक्समूलर महीधर विलसन आदि ने वेद भाष्य किये वह अन्धकार मय लोह काल में ले जाते हैं।

यह उस ब्रह्म ऋषि विरजानन्द जी की जीवन गाथा है, जिनका जन्म १७७६ में पंजाब में करतारपुर के निकट हुआ था। ५ वर्ष की आयु में ये चेचक के कारण नेत्र दृष्टि में हीन हो गये थे, और १३ वर्ष की आयु में माता–पिता की छत्र छाया से वंचित हो गये थे। इन समस्त बाधाओं के होते हुए भी उन्होंने साहस व धीरज का पल्लू नहीं छोड़ा, और अपने युग के संस्कृत व्याकरण के अद्वितीय विद्वान बने।

अष्टाध्यायी अध्ययन का पुनरूद्धार करने और आर्य पद्धति का पुनः आविष्कार करके इतिहास में अपना स्थान बनाया। वे राष्ट्रभक्ति निभर्यता और आत्म सम्मान की साक्षात दिव्य मूर्ति थे। उन्होंने युगों पश्चात् वेदों को स्वतः प्रमाण घोषित किया, और विश्व को महर्षि दयानन्द जैसा शिष्य दिया।

स्वामी विरजानन्द जी के चित्त में एक बड़ी भारी चिन्ता बनी रहती थी। वह यह थी कि संसार का उद्धार किस प्रकार से हो सकता है। स्वामी जी का अनेक राजा माहाराजाओं से सम्बन्ध था। वे उनको आर्ष वैदिक धर्मावलम्बी बनाना चाहते थे। वह समझते थे कि राजा लोग सुधर जायें तो प्रजा का सुधार सरल है। साथ–साथ ही भारत का परतन्त्रता रूपी कण्टक भी उनके हृदय को बहुत कलेश देता रहता था। वे वह इसी चिन्ता में रहते थे, कि प्रिय भारत को परतन्त्रता से कैसे मुक्त करायें, किस प्रकार से फिर संसार में वैदिक धर्म का प्रसार हो।

स्वामी विरजानन्द के हृदय पर आर्ष ग्रन्थों का गहरा प्रभाव

स्वामी विरजानन्द जी का एक दक्षिणात्य ब्राह्मण पड़ोसी था जो अष्टाध्यायी का पाठ किया करता था। एक दिन उसके पाठ को स्वामी जी ने ध्यान से सुना। जब उन्हें ''अजाद्युक्ति'' पद में अपने पक्ष को पुष्ट करने वाला प्रबल प्रमाण अष्टाध्यायी का सूत्र ''कृर्तुकर्मणो कृति (२१३, ६४) मिला'' तब स्वामी जी के हृदय में हर्ष का पारावार न रहा। उसी दिन से स्वामी जी के हृदय में कौमुदी आदि अनार्ष ग्रन्थों के प्रति प्रवल घृणा उत्पन्न हो गयी, और तत्काल ही अपनी पाठशाला से अनार्ष ग्रन्थों का बहिष्कार कर दिया और अष्टायायी महाभाष्य और दूसरा महाभाष्य। इनके अतिरिक्त और जो पुस्तके हैं वे सब अनार्ष लीला मात्र है। स्वामी विरजानन्द जी को आर्ष ग्रन्थों के प्रचार की एक ही धुन थी। आर्ष ज्ञान का यह सूर्य संसार में फिर चमकने लगा।

स्वतन्त्रता संग्राम के सूत्रधार स्वामी विरजानन्द

१९१४ विक्रमी तदानुसार १८५७ ई० में जो स्वतन्त्रता संग्राम लड़ा गया उसके जन्म दाता महर्षि विरजानन्द जी महाराज ही थे। क्योंकि जिन राजाओं ने उस स्वतन्त्रता संग्राम में भाग लिया वे स्वामी विरजानन्द जी के शिष्य थे। स्वामी विरजानन्द जी को इस पवित्र कार्य में प्रेरणा करने वाले उनके गुरू श्री पूर्णानन्द सरस्वती जी थे। यह नितान्त सत्य है कि जिसे सारे संसार के उद्धार की गम्भीर चिन्ता है, जिसने सारे संसार को जगाने का बेड़ा उठाया है। वह किस प्रकार से अपनी जन्म भूमि भारत वर्ष को म्लेच्छों के हाथ में देख सकता था। वे शरीर से अत्यंत वृद्ध हो चुके थे। किन्तु ईश्वर को ऐसा अभिप्रेत न था। कृपालु ईश्वर ने स्वामी विरजानन्द जी के योजना वृक्ष को फलीभूत करने के लिए तथा उनके निराश हृदय में आशा जल सीचने के लिए एक दिव्य विभूति को उनकी पाठशाला में भेजा। उस दिव्य विभूति का नाम दयानन्द सरस्वती था। जिसे पाकर स्वामी विरजानन्द जी ने कहा था कि ''अंधेन याष्टिका लब्धा'' अर्थात अन्धे को लाठी मिल गई।

स्वामी दयानन्द सरस्वती युग प्रवर्तक शिष्य

संवत् १९१७ वि० तदानुसार १८६० ई में स्वामी दयानन्द विरजानन्द जी की मथुरा पाठशाला में पहुंचे। स्वामी विरजानन्द जी से दयानन्द जी ने अष्टाध्यायी महाभाष्य, निरूक्त आदि आर्ष ग्रन्थों का गम्भीर अध्ययन किया और अपनी पूर्व ज्ञान पिपासा को पूर्णतः शान्त किया। स्वामी विरजानन्द जी ने स्वामी दयानन्द को अपने तुल्य विद्यासागर बनाया, और आर्ष ग्रन्थों का प्रचार एवं वैदिक धर्म का प्रसार, भारत स्वातन्त्रय योजना आदि महत्वपूर्ण कार्यों का भार अपने कंधों से उतार कर स्वामी दयानन्द जी को सौंप दिया। अपने जीवन के अन्तिम समय में विरजानन्द जी ने योग्य शिष्य को प्राप्त करके सुख और शान्ति का अनुभव किया। भारत के इतिहास में युग परिवर्तन के लिये अद्भुत घटना थी।

महर्षि दयानन्द सरस्वती जी की देन

उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य तथा अन्तिम चरण में भारत का भविष्य नया मोड ले रहा था, सदियों से सुसुप्त पड़ी देश की चेतना अव्यक्त से व्यक्त और सुसुप्ति से जागृत, जड़ता से प्रगति की तरफ अग्रसर हो रही थी। उसी काल में १७७२ में बंगाल में राजा मोहनराय, १८३४ में रामकृष्ण परम हंस, १८२४ में महर्षि दयानन्द व विवेकानन्द जी १८६३ में मद्रास में थियोसोफिकल सोसाइटी १८८४ महाराष्ट्र में प्रार्थना सभा, इसी काल में मुसलमानों को जगाने सर सैय्यद अहमद ने जन्म लिया।

विशेष ध्यानाकर्षन

महर्षि दयानन्द जी को छोड़कर उक्त सभी विभूतियों ने समय व रूढ़िवादियों के साथ समझौता करके रूढ़ी संस्कृति को ही आगे बढ़ाया इन्होंने माना, वेदों में पशु बलि है, नारी को वेद न पढ़ना, शिक्षा से वंचित रखना, जाति पांति, छुआ–छूत मूर्ति पूजा वेदों में लिखा है, क्योंकि वेदों के शब्दों के अर्थों का इतिहास का अनर्थ किया गया था। किन्तु महर्षि दयानन्द जी ने सर्वप्रथम वेदों के रूढ़ी इतिहास परक अर्थों पर प्रहार किया और संसार के सामने निरूक्त भाष्य के अनुसार वेदों के ईश्वर परक अर्थ किये, वेदों में मूर्ति पूजा नहीं है, वेदों में जाति व्यवस्था नहीं है, वेदों में बलि प्रथा नहीं है, वेदों में अनेक सामाजिक कुरूतियों नहीं है। इन्होंने वेदों के अर्थ सृष्टि क्रमानुसार रख कर एक नई वैचारिक क्रान्ति को जन्म दिया, एक नई लहर पैदा कर दी, सबको झकझोर कर रख दिया। सारे सारे महपुरूष समय के साथ चले किन्तु दयानन्द जी ने समय को अपनी तरफ चलाया, जमाने की गर्दन पकड़ कर अपनी ओर चलाया। सत्यार्थ प्रकाश लिखकर नई क्रान्ति को जन्म दिया। आर्य समाज खोलकर सारे संसार को नई वैचारिक धारा प्रदान की, इसीलिये उन्नीसवीं शताब्दि भारत का भविष्य बदलने वाली हुई और स्वतन्त्रता का मूल पाठ महर्षि दयानन्द जी ने ही पढ़ाया था।

प्राचीन ऋषियों के लेखन शैली का अनुकरण तथा भारतीय संस्कृति का पुन : उद्धार

- प्राचीन काल में गुरू शिष्यों का संवाद व ज्ञानार्जन एवं शंका समाधान में प्रश्नोत्तर के रूप में होता था, क्योंकि मनुष्य की प्रवर्ति है कि वह प्रत्येक जिज्ञासा के लिए प्रश्न करता है, तभी उसकी सन्तुष्टि होती है। यही पद्धति महर्षि दयानन्द जी ने अपने अमर ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश, व ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका व अन्य ग्रन्थों में अपनाई, जो अपने आप में एक प्रेरणा स्रोत है।
- सर्वप्रथम महर्षि दयानन्द जी ने त्रेतावाद का सिद्धान्त दिया, जीव, ब्रह्म प्रकृति को नित्य माना और उसको वेदानुसार सिद्ध किया।
- महर्षि ने वेदों के अर्थ इतिहास परक नहीं, ईश्वर परक किये, और जहाँ जिस मंत्र में जो संगती लगी है उसको शुद्ध रूप में लगाया।
- महर्षि जी ने सिद्ध किया, वेदों में जाति व्यवस्था नहीं है, अपितु गुण कर्मानुसार वर्ण व्यवस्था है, उन्होंने कहा जाति उसको कहते जो जन्म से मृत्यु तक बनी रहे जैसे मनुष्य घोड़ा, गाय, व करोड़ो पशु पक्षी ये प्रभु कृत जातियाँ हैं।
- महर्षि जी ने, तमाम धार्मिक व सामाजिक अन्धविश्वासों को मिटाया। स्वराज्य का बोध कराया, और स्वतन्त्रता आन्दोलन की नीव रखी। महर्षि दयानन्द जी ने सारा सामाजिक ढांचा ही बदल दिया।

स्वामी सेवानन्द जी का प्रेरणा दिवस

3 अगस्त 2017 को आर्यइण्टर कालेज मिलक जि0 रामपुर में उत्साह पूर्वक मनाया गया। इसमें शोभायात्रा गुरूकुल रठोण्डा से प्रारम्भ हुई जिसका शुभारम्भ सभा मन्त्री स्वामी धर्मेश्वरानन्द सरस्वती ने किया शोभायात्रा में बकैनिया, गंगापुर, सिहारी, खमरिया, धनेली उत्तरी, खाला- नगरिया, रौराकलाँ, मिल्क आदि-आदि समाजों ने भाग लिया। शोभायात्रा में मोटर साइकिल, ट्रैक्टर, जीप कारों का लम्बा काफिला था, गुरूकुल के ब्रह्मचारी अपना व्यायाम प्रदर्शन बीच-बीच में जनता को दिखा रहे थे। जगह-जगह लोगों ने आर्य जनता का स्वागत किया नगर पालिका परिषद् अध्यक्ष दीक्षा गंगवार ने भी विद्वानों का स्वागत किया कालेज परिसर में आकर सभी ने भोजन ग्रहण किया तत्पश्चात् सभा प्रारम्भ हुई जिसकी अध्यक्षता डॉ0 सुखदेव शास्त्री ने की संचालन प्रेम प्रकाश आर्य, थान सिंह आर्य ने किया। सर्वप्रथम मञ्यस्थ अतिथियों का अधिकारियों ने फूल मालाओं से स्वागत किया मुख्य अतिथि सभा मन्त्री स्वामी जी ने उनके जीवन के कुछ संस्मरण सुनाकर स्मृतियों को स्मृति ग्रन्थ बनाने की प्रेरणा दी तथा उन्हें स्वामी श्रद्धानन्दजी की तरह धर्म योद्धा की संज्ञा दी पूर्व सभामंत्री श्री जयनारायण अरूण जी ने भी विश्वानिदेव.. की व्याख्या करके उन्हें अपनी भावाञ्जली दी, मुरादाबाद, से श्री ज्ञानेन्द्र गांधी जी ने भी स्वामी जी के प्रति श्रद्धाव्यक्त की, श्री आयेन्द्र कुमार जी, यशोदा, जितेन्द्र जी, स्वामी श्रद्धानन्द सरस्वती बदायूँ, श्री विजयपाल जी तिलहर, ईश्वरी प्रसाद आर्य, हरिश्चन्द्र आर्य, ओमवीर सिंह आर्य, डा0 बुद्धसेन, कृष्णमुनि आदि-आदि ने अपने विचार प्रकट किये। प्रबन्धक सुमित कुमार एवं नगर पालिका अध्यक्ष पति ने सभी का आभार व्यक्त किया प्रधानाचार्य जी ने सभी का धन्यवाद किया सभा अध्यक्ष शास्त्री जी का भाषण प्रभावशाली रहा। जिला सभा के अध्यक्ष एवं मन्त्री जी की पूरी टीम ने उत्साह पूर्वक कार्यक्रम सफल किया आस-पास से आई आर्य जनता को बहुत-बहुत बधाई। शोभायात्रा में स्वागत करने वाले सभी महानुभावों को सभा की ओर से बहुत शुभकामनायें प्राप्त हों।

वेद प्रचार सप्ताह सम्पन्न

1. आर्य समाज औरैय्या इटावा में 8 अगस्त से 15 अगस्त तक उत्साह पूर्वक मनाया गया स्वामी प्रभुवेश जी की कथा प्रातः- सायं होती रही उन्होंने ने 3 अनादि सत्ताओं की व्याख्या वेदानुसार की तथा डॉ0 सर्वेश कुमार जी प्रधान तथा उनकी टीम ने उत्साह पूर्वक कार्यक्रम को भव्य रूप प्रदान किया।

2. आर्य समाज साकेत-मेरठ में वेद प्रचार सप्ताह का आयोजन हुआ आचार्य प्रियंवदा जी के प्रवचन एवं छात्राओं के भजन प्रभावशाली रहे।

3. आर्य समाज चितौली हापुड़ में वेदप्रचार समारोह का आयोजन हुआ। जिसके समापन पर सभा प्रधान डॉ0 धीरज सिंह जी एवं सभा मन्त्री स्वामी जी ने भी जाकर अपना उद्बोधन दिया।

4. आर्य समाज होशदारपुर गढ़ी- बाबूगढ़ छावनी में वेद प्रचार सप्ताह मानाया गया समापन पर डा0 विकास आर्य, रिनंजन सिंह शास्त्री, रामवीर तूफान एवं आचार्य प्रेमपाल शास्त्री जी के प्रवचन हुए रामपाल सिंह प्रधान एवं मन्त्री पवन आर्य मास्टर जी ने संयोजन किया क्षेत्र की भारी जनता ने भाग लेकर लाभ उठाया।

5. आर्य समाज नामनेर आगरा में वेद प्रचार सप्ताह मनाया गया जिसमें श्री अर्जुन देव जी शास्त्री के प्रवचन हुए श्री ओमप्रकाश जी शास्त्री ने यज्ञ सम्पन्न कराया रविवार समापन पर सभा प्रधान डॉ0 श्री धीरज सिंह जी एवं सभा मन्त्री स्वामी जी ने भाग लिया जिला सभा के निर्वाचित अधिकारियों का शपथ ग्रहण समारोह आयोजित हुआ तथा जिले में कार्य करने की प्रेरणा प्रदान की। श्री प्रमोद आर्य प्रधान जी ने सभी को शाल एवं गायत्री मन्त्र के पट्टे से स्वागत किया बाद में भोजन व्यवस्था भी सुन्दर रही।

6. आर्य समाज थापर नगर मेरठ में 13 अगस्त को वेद प्रचार सप्ताह का समापन हुआ जिसमें सभा मन्त्री स्वामी धर्मेश्वरानन्द सरस्वती जी का श्रीकृष्ण के जीवन पर सारगर्भित प्रवचन हुआ। श्री राजेश सेठी जी एवं सोनी जी ने व्यवस्था एवं संयोजन का सुन्दर कार्य किया ।

7. 6 अगस्त रविवार को प्रातः आर्य समाज असावरी बु0शहर में आचार्य ओमव्रत के परिवार में यज्ञ एवं वेदप्रचार कार्यक्रम उनके पिता हरस्वरूप आर्य के प्रेरणा दिवस पर आयोजित हुआ स्वामी अखिलानन्द जी ने यज्ञ कराया ब्र0 कड़कदेव जी एवं भानुप्रकाश आर्य के भजन हुए आचार्य डा0 एल.के. यादव जी के प्रवचन हुए तत्पश्चात् ओमव्रत जी द्वारा लिखित ईश्वर भक्ति के गीतों की पुस्तक प्रभुस्वर सरिता नाम से श्री गणेश दास-गरिमा गोयल दिल्ली ने प्रकाशित कराया उसका विमोचन सभा प्रधान डॉ0 धीरज सिंह जी एवं सभा मन्त्री स्वामी धर्मेश्वरानन्द जी के करकमलों से किया गया। सभा की ओर से आ0 ओमव्रत जी का अभिनन्द भी किया गया सभाप्रधान जी ने उनकी प्रशंसा की तथा स्वामी जी ने उन्हें अपना शुभ आशीर्वाद प्रदान किया क्षेत्रीय आर्यों एवं कार्यकर्त्ताओं का भी सम्मान किया गया। कार्यक्रम का व्यापक प्रभाव रहा मुख्य रूप से नगेन्द्र आर्य जहाँगीराबाद-डूँगरा- दिल्ली- हरियाणा-मध्य प्रदेश तथा आस-पास के सभी आर्य उपस्थित रहे। आचार्य जी वेद प्रचार के लिए पूरे देश में दूर-दूर तक जाते हैं सभा के अवैतनिक उपदेशक के रूप में कार्यरत हैं जो बुलाना चाहें सम्पर्क कर सकते हैं-

ओमव्रत आचार्य
ग्राम- असावरी, बुलन्द शहर
मो0 : 9411614133

वेद प्रचार सप्ताह सम्पन्न

1. आर्य समाज अमरोहा (ज्योतिबा फूले नगर उ0प्र0) का वेद प्रचार सप्ताह बड़े हर्षोल्लास के साथ मनाया गया, यज्ञ के ब्रह्म स्वामी सत्यदेव पुरुषार्थी जी के सारगर्भित प्रवचनों के द्वारा आर्य जनों का मार्ग दर्शन किया। मुख्य यजमान श्री नत्थुसिंह, श्री कृष्ण चन्द्र गोयल, करन सिंह यादव, हेतराम सागर रहे।

2. गुरूकुल महाविद्यालय रूद्रपुर तिलहर शाहजहाँपुर (उ0प्र0) का एक दिवसीय वेद प्रचार समारोह सम्पन्न। कार्यक्रम में उपस्थित रहे प0 आर्येन्द्र कुमार जी, आचार्य चन्दन मिश्र जी, आचार्य अवधेश जी, आचार्य अशोक जी, तथा प्रबन्धक छोटे लाल सिंह और सर्वेश कुमार जी गुरूकुल के सभी अधिकारि गण तथा अचार्य गण उपस्थित रहें।

3. आर्य समाज बलरामपुर में 7 अगस्त से 14 अगस्त तक मनाया गया जिसमें श्री डॉ0 विद्यानचन्द्र जी त्रिपाठी के प्रातः सायं प्रवचन हुए- संजय तिवारी जी एडवोकेट प्रधान ने संयोजन किया कार्यक्रम प्रभाव शाली रहा।

4. आर्य समाज ताजगंज, आगरा में श्रीकृष्ण जन्माष्टमी एवं स्वतन्त्रता दिवस पर 15 अगस्त को प्रातः यज्ञ भूपेन्द्र शास्त्री द्वारा हुआ प्रवचन एवं सायंकाल श्री अर्जुन देव जी स्नातक के प्रवचन हुए तथा प्रसाद वितरण किया गया कार्यक्रम प्रभावशाली रहा। संयोजन राकेश तिवारी, मन्त्री ने किया तथा रामचरन आर्य प्रधान ने सभी का धन्यवाद किया।

वैदिक धर्म गीत

– प्राणवीर सिंह आर्य

वैदिक धर्म हमारा अनुपम, वैदिक धर्म हमारा।
यह है जिसने कोटि जनों को, है इस जग में तारा।
एकेश्वर पूजा सिखलाता, भेद-भाव को दूर भगाता।
प्रणिमात्र से प्रेम बढ़ाता, प्राणों से बढ़ करके प्यारा।
ज्ञान कर्म शुभ भक्ति मिलता, श्रद्धा मेघा मेल कराता।
अन्धकार को दूर हटाता, है यह हृदय उजारा।।
बुद्धि विरूद्ध नहीं कहु इसमें, व्यष्टि-समष्टि मेल है इसमे
त्याग-भोग मिल जाते इसमें, मत पन्थों से न्यारा।।
सब है ईश्वर पुत्र समान, कल्पित-ऊँच-नीच नहिं जान
करो देव का गुण गणगाान, वह भवसागर तारन हार।
जो करता है वह भरता है, अटल नियम यह नित रहता,
आत्मा नित्य नहीं मरता है, सिखला निर्भय करने हारा
यज्ञ धर्म है श्रेष्ठ महान, करता है सबका कल्याण
इसके बिना नहीं उत्थान, यह है शुभ उन्नति का द्वार
समझो सबको मित्र समान, गुण कर्मों के कारण मान
कर लो वेदामृत का पान, जो सन्ताप विनाशन द्वार
आओ आर्य बने हम सारे, कर्तव्यों को पालन हारे।
प्रभु विश्वासी कभी न हारे, जिसने सबका दुःख निवारा।
बनें आर्य जग आर्य बनावें, न्याय सत्य अनुराग बढ़ावे
सच्चे ईश्वर पुत्र कहावे, सत्य धर्म की जय हो नारा।

आर्य मित्र
नारायण स्वामी भवन, ५-मीराबाई मार्ग, लखनऊ दूर/फैक्स: ०५२२-२२८६३२८
का० प्रधान- ०६४१२७४४३४१, मंत्री- ०६८३७४०२१६२, व्यवस्थापक- ६३२०६२२२०५
ई-मेल : apsabhaup86@gmail.com

सेवा में,
....

वेद प्रचार सप्ताह तथा गुरूकुल के ब्रह्मचारियों के उपनयन संस्कार की झलकियाँ

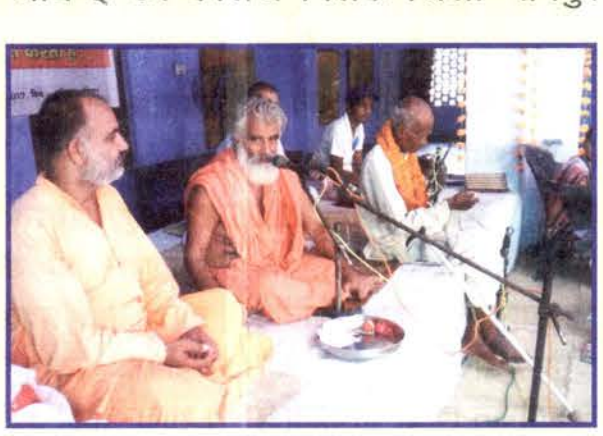

आर्य इण्टर कालेज मिलक जिला–रामपुर की शोभा यात्रा को सम्बोधित करते हुए सभा मन्त्री स्वामी धर्मेश्वरानन्द सरस्वती जी

स्वामी धर्मेश्वरानन्द सरस्वती जी के सानिध्य में गुरूकुल (पुष्पावती) पूठ, में नवीन ब्रह्मचारियों का उपनयन संस्कार सम्पन्न

स्वामी प्रणवानन्द सरस्वती जी के सानिध्य में गुरूकुल पौंधा देहरादून में नवीन ब्रह्मचारियों का उपनयन संस्कार सम्पन्न

आर्य समाज सहारनपुर सरदार पटेल मार्ग खलासी लाइन का वेद प्रचार सप्ताह एवं अभिनन्दन समारोह सम्पन्न।

आर्य समाज अमरोहा का वेदप्रचार सप्ताह सम्पन्न।

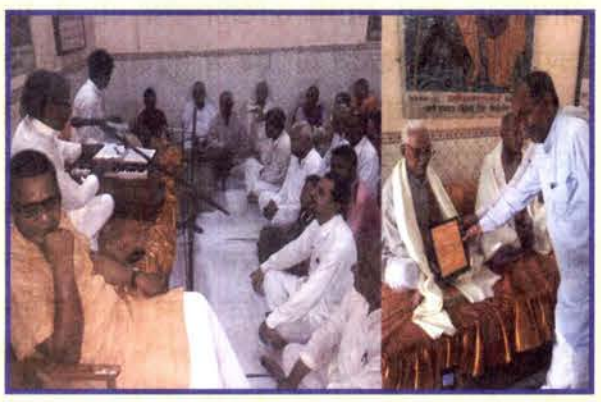

आर्य समाज पीलीभीत का वेदप्रचार सप्ताह एवं सम्मान समारोह सम्पन्न।

आर्य समाज तिलहर शाहजहाँपुर का वेद प्रचार सप्ताह सम्पन्न

आर्य समाज गोलागोकरण नाथ लखीमपुर खीरी का वेद प्रचार सप्ताह सम्पन्न।

आर्य समाज उन्नाव का वेद प्रचार सप्ताह सम्पन्न।

प० हरीशकुमार शास्त्री द्वारा ग्राम चमरौली उन्नव में वेद प्रचार

स्वामी–आर्य प्रतिनिधि सभा, उत्तर प्रदेश सम्पादक – मुद्रक –प्रकाशक –श्री स्वामी धर्मेश्वरानन्द सरस्वती, भगवानदीन आर्य भाष्कर प्रेस, 5–मीराबाई मार्ग, लखनऊ के लिए अस्थायी रूप में शारदा प्रिंटिंग प्रेस, माडल हाउस, लखनऊ से मुद्रित एवं प्रकाशित लेखों में वर्णित भाषा या भाव से सम्पादक का सहमत होना आवश्यक नहीं है– सम्पूर्ण विवादों का न्याय क्षेत्र लखनऊ न्यायालय होगा।